संपादकीय

सत्यांश

प्रकृति, परिमाण और समय

गोस्वामी तुलसीदास ने लिखा है कि भला आदमी अपनी भलमनसाहत से और नीच आदमी अपनी नीचता से ही शोभा देता है। अमरता प्रदान करने की क्षमता के कारण अमृत की प्रशंसा की जाती है, जबकि विष तभी सराहनीय है जब वह विषाक्त करे, जिससे शीघ्र मृत्यु हो जाए -

भला भलाइहि पै लहई लहई निचाइहि नीचु।
सुधा सराहिअ अमरता गरल सराहिअ मीचु।।

कोई भी वस्तु या व्यक्ति अपनी मूल प्रकृति में ही शोभनीय-प्रशंसनीय है। प्रत्येक चीज की मूल प्रकृति प्रायः अनुश्रूत है, पर अनुश्रूत होने से वह ठीक भी हो, यह आवश्यक नहीं है। मूल प्रकृति पर विचार से पूर्व तुलसीदास की एक अन्य उक्ति द्रष्टव्य है -

तुलसी मीठी अमी ते मांगी मिले जो मीच।
सुधा सुधाकर समय बिन्दु कालकूट ते नीच।।

समय पर मांगने से मौत भी मिल जाए तो वह अमृत से अधिक मीठी मालूम पड़ती है; परंतु बिना अवसर के अमृत या चन्द्रमा भी मिल जाए, तो वे कालकूट जहर से अधिक बुरे लगते हैं। तुलसी के इस कथन में उपयुक्त अवसर व संदर्भ की महत्ता प्रतिपादित है। अमृत और विष दोनों की अलग-अलग समय में सार्थकता होती है। जहाँ विष की जरूरत हो, वहाँ अमृत विष से अधिक खतरनाक सिद्ध होगा। दवा कितनी ही मूल्यवान और जीवनदायी क्यों न हो, उसकी सार्थकता तबीयत खराब होने पर ही है। यहीं मूलभूत प्रकृति, उपयुक्त समय के साथ मात्रा या परिमाण का भी औचित्य है। उचित मात्रा से अधिक दवा जानलेवा साबित होती है और मात्रा से कम व्यर्थ। कोई भी पदार्थ अपनी मूल प्रकृति के साथ समुचित मात्रा में अवसर के अनुकूल ही उपयुक्त हो सकता है। नारायण पंडित ने अवसर की महिमा बखान करते हुए कहा है कि करणीय कार्य समय से नहीं करने पर उसका पूरा रस समय पी जाता है।

सवाल यह उठता है कि वस्तु, पदार्थ, जीव या फिर किसी व्यक्ति के मूलभूत गुण का पता कैसे पाया जाए? जड़ पदार्थों की प्रकृति का पता लगाना फिर भी आसान है, क्योंकि इनकी प्रवृत्ति सामान्यतः स्थिर रहती है, लेकिन सजीवों की प्रकृति मन की गति की तरह चलायमान होती है, जिसका अनुमान कठिन होता है। स्वयं जीवधारी नहीं जानता कि अगले क्षण वह क्या करने वाला है। यदि वह सोचता है कि गाली नहीं देनी है, झगड़ा नहीं करना है, हिंसा नहीं करनी है, पर कोई दूसरा जैसे गाली देते झगड़ा करता है तो वह जवाबी प्रतिक्रिया में गाली-हिंसा सब देता-करता है। इस प्रकार व्यक्ति का अपना बर्ताव बहुत हद तक बाहरी वातावरण पर निर्भर है।

जो प्रकृति-प्रवृत्तियाँ, गुण-विशेषताएँ वस्तुओं-व्यक्तियों में निर्धारित मानी जाती हैं, वे सामान्य विशेषताएँ भर हैं। प्रचलित जातीय प्रकृति-गुण से मुक्त भी सदैव अनेक अपवाद रहे हैं, जिनका सौंदर्य किसी मान्यता प्राप्त प्रचलित गुणधारी प्रकृतिवाले से कम नहीं, बल्कि कई बार अधिक सिद्ध हुआ है। प्रतिकूल विशेषताएँ दुर्लभ वस्तुओं में पाई जाती हैं। वस्तुतः जैविक गुण व जातीय विशेषताओं के रहते या परे जो व्यापक पर कामना योग्य है, वह भी वरेण्य है। साँप विषैला होता है, मिर्च तीखी होती है, शेर हिंसक होता है; पर सर्प विषैला नहीं भी होता, मिर्च तीखी नहीं भी होती, शेर हिंसक नहीं भी होते, राक्षस देवतुल्य, मानवोचित व्यवहार भी करते हैं। दूसरी ओर, मनुष्य दानवी आचरण करते भी धड़ल्ले से मिल जाते हैं। वस्तुतः समय-परिस्थिति के अनुरूप कभी विष विषाक्त न करे तो उससे लाभ हो सकता है। समय, संदर्भ के अनुकूल ही कोई चीज अच्छी-बुरी होती है, उसकी प्रकृति और गुण प्रशंसनीय-अप्रशंसनीय भी। इस प्रकार कभी गुण भी अवगुण और अवगुण भी गुण साबित हो सकता है। ये दोनों परस्पर संगुफित हैं ईश्वर के निर्गुण-सगुण रूप के समान। परब्रह्म में सगुण-निर्गुण की एकाकारता होती है -

जो गुण रहित सगुण सोई कैसे।
जल हिम उपल विलग नहिं जैसे।।